RNI No. 26281/74 रजि. नं. पी.बी./जे.एल–011/2015-17

ओ३म्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

साप्ताहिक

आर्य मर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का प्रमुख पत्र

वर्ष: 75, अंक : 28 एक प्रति 2 : रुपये

रविवार 23 सितम्बर, 2018

विक्रमी सम्वत् 2075, सृष्टि सम्वत् 1960853119

दयानन्दाब्द : 194 वार्षिक शुल्क : 100 रुपये

आजीवन शुल्क : 1000 रुपये

दूरभाष : 0181-2292926, 5062726

E-mail: apspunjab2010@gmail.com,

www.aryapratinidhisabha.org

वर्ष–75, अंक : 28, 20-23 सितम्बर 2018 तदनुसार 7 आश्विन, सम्वत् 2075 मूल्य 2 रु०, वार्षिक 100 रु० आजीवन 1000 रु०

अभय ज्योति प्राप्त करूँ

ले०-स्वामी वेदानन्द (दयानन्द) तीर्थ

न दक्षिणा वि चिकिते न सव्या न प्राचीनमादित्या नोत पश्चा।
पाक्या चिद्युसवो धीर्या चिद्युष्मानीतो अभयं ज्योतिरश्याम्।।

-ऋ० २।२७।११

शब्दार्थ-हे **आदित्या:** = आदित्यो ! **न** = न **दक्षिणा** = दाहिना **विचिकिते** = पहचानता हूँ, **न** = न **सव्या** = बायाँ, **न** = न ही **प्राचीनम्** = सामने का **उत्** = और **न** = न ही **पश्चा** = पीछे का **विचिकिते** = विशेष जानकार हूँ। हे **वसव:** = बसाने वालो ! मैं **पाक्या+चित्** = परिपक्व और **धीर्या+ चित्** = धैर्यशालिनी बुद्धि के द्वारा **युष्मानीत:** = तुमसे ले-जाया जाता हुआ **अभयम्** = भयरहित **ज्योति:** = प्रकाश को **अश्याम्** = प्राप्त करूँ।

व्याख्या-किसी से जब कुछ लेना हो और विशेषकर मार्ग-जीवन-यात्रा-मार्ग का ज्ञान लेना हो तो अत्यन्त विनम्र होकर पूछना चाहिए। इसी भाव से जिज्ञासु आदित्यों की शरण में आकर कहता है-**'न दक्षिणा... नोत पश्चा'** मुझे दायाँ-बायाँ, आगा-पीछा कुछ नहीं सूझता अर्थात् मैं दिग्विमूढ़ हूँ, मार्ग नहीं सूझता। मैं अन्धकार में फँस गया हूँ। मैंने अपनी परिपक्व तथा धृतिमती बुद्धि से निश्चय किया है कि आपकी शरण में रहना ठीक है। मुझे विश्वास है कि-**तुम्हारे सम्बन्ध में मैंने सुना है-**

त्री रोचना दिव्या धारयन्त हिरण्यया: शुचयो धारपूता:।
अस्वप्नजो अनिमिषा अदब्धा उरुशंसा ऋजवे मर्त्याय।।

-ऋ० २।२७।९

हितरमणीय पवित्र धाराओं से पवित्र करने वाले [पवित्रता की धारा बहाने वाले], निद्रा-तन्द्रारहित दबंग, अतिप्रशंसनीय आदित्य सरल मनुष्यों के लिए तीन दिव्य ज्योतियाँ धारण करते हैं। आपकी इस महिमा को जानकर मैं **'युष्माकं मित्रावरुणा प्रणीतौ परि श्वभ्रेव दुरितानि वृज्याम्'** [ऋ० २।२७।५] हे मित्र, वरुण और अर्यमन्! तुम्हारी उत्तम नीति में चलकर मैं स्वच्छता को धारकर दुरितों= बुराइयों को छोड़ दूँ, अत: मैं आपकी नीति का अनुसरण करता हूँ। भगवान् कहते हैं-**न किष्टं घ्नन्त्यन्तितो न दूराद्य आदित्यानां भवति प्रणीतौ'** [ऋ० २।२७।१३]-उसे न दूर से कोई मार सकते हैं, न समीप से, जो आदित्यों की उत्तम नीति में चलता है। और-

नहि तेषाममा चन नाध्वसु वारणेषु। ईशे रिपुरघशंस:।।
यस्मै पुत्रासो अदिते: प्र जीवसे मर्त्याय। ज्योतिर्यच्छन्त्यजस्रम्।।

-ऋ० १०।१८५।२,३

उन्हें कोई रोग नहीं होता, न ही उनके मार्गों तथा उपकरणों पर पाप प्रचारक शत्रु समर्थ होता है, जिस मनुष्य को आदित्य जीने के लिए अखण्ड ज्योति देते हैं। अत: आदित्यो! भगवान् से प्रार्थना है-**'उर्वश्यामभयं ज्योतिरिन्द्र मा नो दीर्घा अभि नशन्तमिस्रा:'** [ऋ० २।२७।१४]-हे प्रकाशकों-के-प्रकाशक ! मैं बहुत विशाल अभय-ज्योति प्राप्त करूँ, लम्बी अन्धकारमयी रात्रियाँ प्राप्त न हों। जीवन में प्रकाश रहने से सरलता होती है। अन्धकार में भटकना-ही-भटकना है।

(स्वाध्याय संदोह से साभार)

तदेवाग्निस्तदादित्यस्तद्वायुस्तदु चन्द्रमा:।
तदेव शुक्रं तद् ब्रह्म ता आप: स प्रजापति:।।

-यजु० ३२.१

भावार्थ-उस परब्रह्म के यह अग्नि आदि सार्थक नाम हैं, निरर्थक एक भी नहीं। अग्नि नाम परमात्मा का इसलिए है कि वह सर्वव्यापक, स्वप्रकाश ज्ञानस्वरूप, सबका अग्रणी नेता और परम पूजनीय है। अविनाशी होने से और सारे जगत् का प्रलयकर्ता होने से उसका नाम आदित्य है। अनन्त बलवान् होने से उसको वायु कहते हैं। सब प्रेमी भक्तों को आनन्द देता है, इसलिए उस जगत्पति का नाम चन्द्रमा है। शुद्ध पवित्र ज्ञानस्वरूप होने से शुक्र, और सबसे बड़ा होने से ब्रह्म, सर्वत्र व्यापक होने से आप सब प्रजाओं का स्वामी, पालक और रक्षक होने से उस जगत्पिता को प्रजापति कहते हैं। ऐसे ही सब वेदों में, परमात्मा के सार्थक अनन्त नाम निरूपण किये हैं, जिनको स्मरण करता हुआ, पुरुष कल्याण को प्राप्त हो जाता है।

पूषन् तव व्रते न रिष्येम कदाचन।
स्तोतारस्त इह स्मसि।।

-यजु० ३४.४१

भावार्थ-हे सबके पालन पोषण करने वाले परमात्मन्! आपके अटल सृष्टि नियमों के अनुसार अपना जीवन बनाने वाले हम आपके सेवक, इस लोक वा परलोक में कभी दु:खी नहीं हो सकते, इसलिए आपकी प्रेमपूर्वक स्तुति करने वाले हम सदा सुखी होते हैं। आप परमपिता हम पर कृपा करें कि हम आपकी श्रद्धा भक्तिपूर्वक उपासना, प्रार्थना और स्तुति नित्य किया करें।

स नो बन्धुर्जनिता स विधाता धामानि वेद भुवनानि विश्वा।
यत्र देवा अमृतमानशानास्तृतीये धामन्नध्यैरयन्त।।

-यजु० ३२.१०

भावार्थ-जो जगत्पति, हम सबका बन्धु और सबका जनक, सबके कर्मों का फलप्रदाता, सब लोक लोकान्तरों को और सबके जन्म स्थान और नामों को जानता है, वह जीव और प्रकृति से विलक्षण है। उसी परमात्मा में विद्वान् लोग, मुक्ति सुख को अनुभव करते हुए, अपनी इच्छापूर्वक सर्वत्र विचरते हैं।

गुरुकुलों में नीतिपरक सन्देश

ले०-डॉ. निर्मल कौशिक 163, आदर्श नगर-ओल्ड कैंट रोड, फरीदकोट

भारतीय संस्कृति की समृद्ध धरोहर के रूप में संस्कृत भाषा और संस्कृत साहित्य आज के तकनीकी और वैज्ञानिक प्रगति के युग में भी अपनी गुणवत्ता और उपयोगिता के कारण अत्यन्त लोकप्रिय सिद्ध हो रहे हैं। संस्कृत देववाणी हैं और इसमें रचित साहित्य अमर और अपौरुषेय। आज वेद संस्कृत भाषा और देवनागरी लिपिबद्ध होकर अपने ज्ञान की आभा से पूरे विश्व को अभिमंडित कर रहे हैं। वेद मानव कल्याण हेतु वह ईश्वरीय वरदान है जो इष्ट की प्राप्ति और अनिष्ट को रोकने का उपाय बताता है। विदेशी विद्वानों ने भी इस संस्कृत साहित्य की गरिमा को स्वीकार करते हुए मुक्तकंठ से इसकी अनुशंसा की है। पाश्चात्य विद्वान् मैक्समूलर का कथन है कि ''जब तक पृथ्वी पर पर्वत और सरिता हैं तब तक 'ऋग्वेद' की महिमा संसार में प्रसारित होती रहेगी।

सम्पूर्ण-संस्कृत वाङ्मय भारतीय जीवन पद्धति और भौगोलिक अवस्था के अनुरूप जीवन यापन करने के लिए प्रकाश स्तम्भ के समान जीवनपथ आलोकित करता है। जब तक हमारे ऋषियों को आश्रमों में स्थापित गुरुकुलों में छात्रों को वैदिक शिक्षा के माध्यम से कर्म-उपासना-और ज्ञान की शिक्षा प्रदान की जाती रही तब तक भारत 'अध्यात्म' के क्षेत्र में विश्वगुरु के पद पर आसीन रहा। वैदिक शिक्षा और गुरुकुल परम्परा के ह्रास के साथ ही वैदिक शिक्षा रूपी मेरू दण्ड खण्डित हो गया और विदेशी आक्रमणों के कारण-अखण्ड भारत भी खण्ड-2 हो गया।

किसी कवि ने अत्यन्त सुन्दर शब्दों व संस्कृत वाङ्मय के विषय में कहा है-

संस्कृते संस्कृतिर्ज्ञेया-संस्कृते सकला कला।
संस्कृते सकलं ज्ञानं संस्कृते किं न वर्तते।।

संस्कृत भाषा में दो प्रकार का साहित्य रचा गया-लोक मंगल की दृष्टि से वेद,उपनिषद् पुराणादि तथा लोक रंजन की दृष्टि से नाटक, कथा, और काव्य, वैदिक साहित्य में वेद महत्वपूर्ण ग्रन्थ है। वेद चार है-ऋग्वेद, यजुर्वेद, अथर्ववेद, सामवेद-वेदों का विषय-सृष्टि रचना, देवों की उत्पत्ति, मानव व्यवहार-पदार्थ विज्ञान और ब्रह्म-जिज्ञासा है।

इन वेदों के आधार पर भारतीय संस्कृति में वर्णित, धर्म, कर्म, ज्ञान और ध्यान के माध्यम से विश्व शान्ति की स्थापना का प्रयास किया जाता रहा है। संस्कृत नाम भाषा-संस्कृत भाषा-यह सुसंस्कृत लोगों की भाषा है।

भारतीय संस्कृति हमारे गौरव का प्रतीक है। प्राय: कहा जाता है। 'संस्कृते संस्कृति' संस्कृत भाषा के बिना भारतीय संस्कृति को समझना अत्यन्त कठिन है। आज भी हम दैनिक जीवन में अनजाने ही कितने शब्द अनायास ही प्रयुक्त करते है। इतना ही नहीं कुछ संस्कृति को मुखरित करने वाली संस्कृत भाषा की उक्तियाँ तो हमारी व्यवहारिक जीवनशैली का अभिन्न अंग ही प्रतीत होने लगी हैं। यथा सत्यमेव जयते, अतिथि देवो भव, आयुष्मान भव, तथास्तु, कर्मण्येवाधिकास्ते, किंकर्तव्यविमूढ़ केन्द्र सरकार के कुछ विभागों ने संस्कृत की उक्तियों का प्रयोग-अपने उद्घोष के रूप में किया है यथा-दूर संचार के लिए अहर्निशं सेवामहे बीमा योगक्षेत्र वहाम्यहम्, योग कर्मसु कौशलय न्यायालय-और संसद में लिखा है 'सत्यमेव जयते' सेना के कार्यालयों में भी वीर भोग्या वसुन्धरा, संघौं शक्ति कलियुगे, जननी जन्म भूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी जैसी प्रेरक उक्तियां प्राय: देखने को मिलती है।

गुरुकुल प्रणाली ने वेद-विद्या को अध्ययन अध्यापन से जोड़कर वेदों के प्रचार-प्रसार का मार्ग प्रशस्त कर दिया। वेद मन्त्रों से यज्ञादि करते हुए शिष्य विद्या अर्जित करते थे।

गुरुकुल में रहते हुए गुरु और शिष्य के अन्तर्सम्बन्धों की प्रगाढ़ता हेतु ईश्वर से प्रार्थना की जाती है कि-

ओ३म् सह नाववतु, सह नौ भुनक्तु, सहवीर्य करवाव है
तेजस्विनावधीत मस्तु मा विद्विषा वहै। ओ३म् शान्ति: शान्ति:।।

गुरु शिष्य संयुक्त स्वर से प्रार्थना करते है कि यह अध्ययन अध्यापन हम दोनों को अर्थात् गुरु और शिष्य को बुरी भावनाओं से बचाकर ज्ञान प्राप्ति कराए।

यह पठन और पाठन गुरु और शिष्य का व्यवहार उत्तम बनाए। यह विद्या की साधना हम दोनों का चरित्र निर्माण करे।

शिक्षक और छात्र एक साथ ज्ञान के क्षेत्र में कार्य करते हुए असाध्य को साध्य बनाए और महान बने।

हम दोनों गुरु और शिष्य का अध्ययन प्रकाशवान बने। हमारी शिक्षा को पवित्र ज्ञान प्राप्त हो।

हम दोनों गुरु और शिष्य परस्पर द्वेष न करें। प्रेम भाव से रहें।

ईश्वर की कृपा से आध्यात्मिक ज्ञान द्वारा दैविक दैहिक और भौतिक तापो की शान्ति हो।

इसी संकल्प के साथ शिष्य गुरु के आश्रम में दीक्षित होता था। दीक्षा का अर्थ है उसे आश्रम में शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार मिल जाता था। शिष्यत्व का गौरव और सम्मान प्राप्त होता था। शिक्षा समाप्ति पर दीक्षान्त होता था। उसे उपाधि से अलंकृत कर विदा किया जाता था। अत: शिक्षा का अधिकार गुरुकुल प्रणाली की ही देन है। आज दीक्षान्त का रूप ही आधुनिक कन्वोकेशन है।

गुरुकुलों और आश्रमों में दी जाने वाली वेदविद्या के माध्यम से विद्यार्थी सर्वप्रथम-नैतिकता-अनुशासन, समानता-मानवता-परोपकार और त्याग की भावना का पाठ ही सीखता था। श्रुति-स्मृति परम्परा का वह उन पाठों का अपने जीवन में व्यवहारिक रूप से प्रयोग भी करता था। सत्यंवद, धर्मंचर आचार्य देवोभव, मातृ देवो भव, पितृ देवो भव, अतिथि देवो भव, राष्ट्र देवो भव, अहिंसा परमो धर्म: तथा स्वाध्यायात् माप्रमद : जैसे आदर्शों को अपना कर वह समाज और देश के लिए एक विद्वान और गुणवान नागरिक के रूप में अपना दायित्व निभाने के योग्य सिद्ध होता था। वह ईश्वर से प्रार्थना करता था कि हे ईश्वर-असतो मा सद्गमय-मृत्योर्माड-मृत्गमय-तमसो मायो-ज्योतिर्गमय। अर्थात् हे ईश्वर मुझे अन्धकार से प्रकाश की ओर, मृत्यु से अमरत्व की ओर तथा-अन्धकार (अज्ञान) से प्रकाश (ज्ञान) की ओर ले चलो। उसका लक्ष्य था। सत्य (ज्ञान) की प्राप्ति।

वह आदर्श व्यक्तित्व को धारण कर समाज और देश के लिए अपना सर्वस्व न्यौछावर करने से भी कभी पीछे नहीं हटता था। 'वेदोऽखिलो धर्म मूलम्' के महावाक्य के अनुसार वेद मार्ग पर चलता हुआ कभी अपने 'धर्म' और कर्त्तव्य से विमुख नहीं होता। ऋग्वेद के अनुसार वह पूरे विश्व को एक ग्राम के रूप में स्वीकार कर पूरे विश्व को आत्मीय भाव से देखता है-

'इमा रूद्राय तव से कने क्षाद्वीराय प्रभरामहेमती
यथा सम सद्विपदे चतुष्पदे विश्वंपुष्टं ग्रामे अस्मिन्नातुरम्'

ऋग्वेद-मण्डल-1-सूक्त 114

अर्थात्-जब आप्त, सत्यवादी, धर्मात्मा, वेदों के ज्ञाता, पढ़ाने और उपदेश करने वाले विद्वान तथा पढ़ाने और उपदेश करने हारी स्त्री उत्तम शिक्षा से ब्रह्मचारी और श्रोता पुरुषों तथा ब्रह्मचारिणी और सुनने हारी स्त्रियों को विद्यायुक्त करते हैं। तभी ये लोग शरीर और आत्मा के बल को प्राप्त होकर सब संसार अर्थात् विश्वग्राम को पुष्ट (सुखी) कर देते हैं। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने भी पूरे विश्व के मनुष्यों को श्रेष्ठ मानव बनने का आहवान देते हुए कहा था 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम् अर्थात्-विश्व को श्रेष्ठ बनाओ। इतना ही नहीं-अयं निज: परोवेति गणना लघुचेतसाम्'

उदार चरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम् कहकर हमारे मनीषियों ने पूरे विश्व को एक परिवार मानकर सद्भावना का संदेश दिया। इस प्रकार गुरुकुल के परिवेश में नैतिकता का पाठ पढ़ाया जाता था जो आजीवन नीतिपरक सन्देश बन जाता था।

सम्पादकीय

पितर कौन हैं? उनका श्राद्ध कैसे करें?

हिन्दू समाज में प्रतिवर्ष पितृपक्ष किया जाता है जो श्राद्ध के रूप में प्रचलित है। श्राद्ध के नाम पर समाज में बहुत पाखण्ड़ फैलाया जाता है। लोगों को पितरों का भय दिखाकर उन्हें लूटा जाता है। पितरों के नाम पर तरह-तरह की वस्तुएं ली जाती हैं और कहा जाता है कि इससे उनके पितरों को शान्ति मिलेगी। अगर इस प्रकार नहीं किया गया तो उनके पितर अशान्त रहेंगे और आपका सर्वनाश कर देंगे। इस प्रकार के भय दिखाकर ढ़ोंगी ब्राह्मणों के द्वारा समाज में पाखण्ड़ फैलाया जाता है। लोगों से वस्त्र, सोना, चांदी आदि सब कुछ ढ़ोंगियों के द्वारा लूटा जाता है। लोगों की आस्था के साथ खिलवाड़ किया जाता है। इसलिए जब तक लोगों को इस बात का ज्ञान नहीं होगा कि पितर कौन हैं? उनका श्राद्ध किस प्रकार किया जाता है? तब तक वे इसी प्रकार पाखण्ड़ियों के जाल में फंसते रहेंगे तथा वे ढ़ोंगी अपना स्वार्थ सिद्ध करते रहेंगे। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका के 24 वें अध्याय में पञ्चमहायज्ञ के अन्तर्गत श्राद्ध एवं तर्पण की विषय वस्तु पर प्रकाश ड़ाला है। पितर कौन हैं? उनका श्राद्ध कैसे करें इस पर विचार करते हुए महर्षि दयानन्द सरस्वती जी तीसरे यज्ञ पितृयज्ञ के बारे में लिखते हैं कि-

पितृयज्ञ के दो भेद हैं-एक तर्पण और दूसरा श्राद्ध। उनमें से जिस कर्म को करके विद्वान् रूप देव, ऋषि और पितरों को सुखयुक्त करते हैं, सो तर्पण कहलाता है तथा जो उन लोगों की श्रद्धापूर्वक सेवा करना है, उसी को श्राद्ध जानना चाहिए। यह तर्पण आदि कर्म विद्यमान अर्थात् जीते हुए जो प्रत्यक्ष हैं, उन्हीं में घटता है, मरे हुओं में नहीं। क्योंकि मृतकों का प्रत्यक्ष होना असम्भव है। इसलिए उनकी सेवा नहीं हो सकती तथा जो उनके लिए कोई पदार्थ देना चाहे, वह भी उनको नहीं मिल सकता। इससे केवल विद्यमानों की श्रद्धापूर्वक सेवा करने योग्य और सेवा करने का नाम तर्पण और श्राद्ध वेदों में कहा है। क्योंकि सेवा करने योग्य और सेवा करने वाले इन दोनों ही के प्रत्यक्ष होने से यह सब काम हो सकता है, दूसरे प्रकार से नहीं। इसलिए तर्पण आदि कर्म करने योग्य तीन हैं- देव, ऋषि और पितर। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी देव और मनुष्य के लक्षण बताते हुए कहते हैं कि- दो लक्षणों के पाए जाने से मनुष्यों की दो संज्ञा होती हैं, अर्थात् एक देव और दूसरी मनुष्य। उनमें भेद होने के सत्य और झूठ दो कारण हैं। जो कोई सत्यभाषण, सत्यस्वीकार और सत्यकर्म करते हैं वे देव तथा जो झूठ बोलते, झूठ मानते और झूठ कर्म करते हैं, मनुष्य कहाते हैं। इसलिए झूठ को छोड़कर सत्य को प्राप्त होना सबको उचित है। इस कारण से बुद्धिमान लोग निरन्तर ही सत्य कहें, मानें और करें। क्योंकि सत्यव्रत आचरण करने वाले जो देव हैं, वे तो कीर्तिमानों में भी कीर्तिमान होके सदा आनन्द में रहते हैं। परन्तु उनसे विपरीत चलने वाले मनुष्य दु:ख को प्राप्त होकर सब दिन पीड़ित ही रहते हैं। सत्यधारी विद्वान् ही देव कहलाते हैं।

जो सब विद्याओं को पढ़ के औरों को पढ़ाता है, यह ऋषिकर्म कहाता है और उससे जितना कि मनुष्यों पर ऋषियों का ऋण हो, उस सबकी निवृत्ति उनकी सेवा करने से होती है। इससे जो नित्य विद्यादान, ग्रहण और सेवाकर्म करना है, वही परस्पर आनन्दकारक है और यही व्यवहार अर्थात् विद्याकोष का रक्षक है। विद्या पढ़ के सभी को पढ़ाने वाले ऋषियों और देवों की प्रिय पदार्थों से सेवा करने वाला विद्वान् बहुत पराक्रमयुक्त होकर विशेष ज्ञान को प्राप्त होता है। इससे आर्षेय अर्थात् ऋषिकर्म को सब मनुष्य स्वीकार करें।

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी आगे लिखते हैं कि-घर का पिता वा स्वामी अपने पुत्र, पौत्र, स्त्री और नौकरों को इस प्रकार आज्ञा देवें कि- जो जो हमारे मान्य पिता, पितामहादि, माता, मातामहादि और आचार्य तथा इनसे भिन्न भी विद्वान् लोग, जो अवस्था वा ज्ञान में बड़े और मान्य करने योग्य हैं, तुम लोग उनकी उत्तम-उत्तम जल, रोग नाश करने वाले उत्तम अन्न, सब प्रकार के उत्तम फलों के रस आदि पदार्थों से नित्य सेवा किया करो, जिससे कि वे प्रसन्न होके तुम लोगों को सदा विद्या देते रहें। क्योंकि ऐसा करने से तुम लोग भी सदा प्रसन्न रहोगे और ऐसा विनय सदा रखो कि हे पूर्वोक्त पितर लोगों! आप हमारे अमृतरूप पदार्थों के भोगों से तृप्त हूजिए और हम लोग जो-जो पदार्थ आप लोगों की इच्छा के अनुकूल निवेदन कर सकें, उन-उन की आज्ञा दिया कीजिए। हम लोग मन, वचन और कर्म से आप को सुख देने के लिए स्थित हैं। आप किसी प्रकार का दु:ख न पाईए। क्योंकि जैसे आप लोगों ने बाल्यावस्था और ब्रह्मचर्याश्रम में हम लोगों को सुख दिया है, वैसे ही हमको भी आप लोगों का प्रत्युपकार अवश्य करना चाहिए कि जिससे हम लोगों को कृतघ्नता दोष न प्राप्त हो।

पितृ शब्द से सब के रक्षक श्रेष्ठ स्वभाव वाले ज्ञानियों का ग्रहण है। क्योंकि जैसी रक्षा मनुष्यों की सुशिक्षा और विद्या से हो सकती है, वैसी किसी दूसरे प्रकार से नहीं। इसलिए जो विद्वान् लोग मनुष्यों को ज्ञानचक्षु देकर उनके अविद्यारूपी अन्धकार के नाश करने वाले हैं, उनको पितर कहते हैं। उनके सत्कार के लिए मनुष्यमात्र को ईश्वर की यह आज्ञा है कि वे उन आते हुए पितर लोगों को देखकर अभ्युत्थान अर्थात् उठ करके प्रीतिपूर्वक कहें कि- आईए! बैठिए! कुछ जलपान कीजिए और खाने पीने की आज्ञा दीजिए। पश्चात् जो-जो बातें उपदेश करने योग्य हैं, सो सो प्रीतिपूर्वक समझाईए जिससे हम लोग भी सत्यविद्यायुक्त होके सब मनुष्यों के पितर कहावें। परमात्मा से ऐसी प्रार्थना करें कि हे परमेश्वर! आपके अनुग्रह से जो शीलस्वभाव और सबको सुख देने वाले विद्वान् लोग अग्नि नाम परमेश्वर और रूप गुणवाले भौतिक अग्नि की अलग-अलग करने वाली विद्युत् रूप विद्या को यथावत् जानने वाले हैं, वे इस विद्या और सेवा यज्ञ में अपनी शिक्षा विद्या के दान और प्रकाश से अत्यन्त हर्षित होके हमारी सदा रक्षा करें। उन विद्यार्थियों और सेवकों के लिए भी आज्ञा है कि जब जब वे आवें वा जावें, तब तब उनको उत्थान नमस्कार और प्रियवचन आदि से सन्तुष्ट रखें तथा फिर वे लोग भी अपने सत्यभाषण से निर्वैरता और अनुग्रह आदि सद्गुणों से युक्त होकर अन्य मनुष्यों को उसी मार्ग में चलावें और लोभादि रहित होकर परोपकार के अर्थ अपना सत्य व्यवहार रखें। इस भेद से विद्वानों के दो मार्ग होते हैं-एक देवयान और दूसरा पितृयान। अर्थात् जो विद्यामार्ग है वह देवयान और जो कर्मोपासना मार्ग है वह पितृयान कहाता है। सब लोग इन दोनों प्रकार के पुरूषार्थ को सदा करते रहें।

भाद्रपद शुक्ल पक्ष की पूर्णिमा 24 सितम्बर से हिन्दू समाज में प्रचलित यह पितृपक्ष प्रारम्भ हो रहा है। इन दिनों में लोगों द्वारा खूब पाखण्ड़ किया जाता है। इसलिए महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने पितृ यज्ञ के अन्तर्गत श्राद्ध और तर्पण के विषय पर बहुत सुन्दर प्रकाश ड़ाला है। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने लोगों को बताया कि श्राद्ध और तर्पण का वास्तविक स्वरूप क्या है? वर्तमान समय में भी श्राद्ध के नाम पर बहुत सी भ्रांतियां लोगों के मन में हैं। महर्षि दयानन्द जी के अनुसार केवल जीवित माता पिता का ही श्राद्ध हो सकता है। इसलिए हमें मन से इस भ्रांति को निकाल देना चाहिए कि मरे हुए पितरों के नाम पर भोजन कराने से उन्हें तृप्ति मिलेगी। यह पाखण्ड़ है जिसके नाम पर लोगों को लूटा जाता है। जीवित माता-पिता की श्रद्धापूर्वक सेवा करने से उनका आशीर्वाद मिलता है। इसलिए श्राद्ध के सही स्वरूप को समझकर माता-पिता, गुरू-आचार्यों, विद्वान् सन्यासियों, महात्माओं की सेवा करें और उनके द्वारा दिए जाने वाले उपदेशों को जीवन में धारण करें। यही श्राद्ध और तर्पण का वास्तविक स्वरूप है।

प्रेम भारद्वाज
संपादक एवं सभा महामन्त्री

नैतिकता का सर्वोच्च वैदिक आदर्श

ले०-कमलेश कुमार संस्कृत विभाग, भाषासाहित्यभवनम्, गुजरात विश्वविद्यालय, अहमदाबाद

आहार, निद्रा, भय तथा मैथुन-ये चार क्रियाएं प्राणिमात्र में होती हैं। मानव को भी यदि एक प्राणी के रूप में देखें, तो उसमें भी ये सभी क्रियाएं वर्तमान हैं। इस कारण पशु तथा मानव में कोई अन्तर नहीं है। पर सूक्ष्मता से विचारने पर पता चलता है कि पशु इन क्रियाओं को अपनी वृत्ति समझते हैं। अत: इनके आवेग के उठने पर सहज रूप से उस क्रिया में प्रवृत्त हो जाते हैं। जबकि मानव की स्थिति इससे भिन्न होती है। मानव में जब इन क्रियाओं का आवेग उठता है, तब वह प्रथम तो इन क्रियाओं को अपनी वृत्ति समझता है, पर तुरन्त ही उसके मन में कुछ विचार उत्पन्न होते हैं और फिर वह इन विचारों की छाया में अपने विवेक को सामने रख कर उस क्रिया में प्रवृत्त होता है। इस प्रकार प्राणियों में उठने वाले आहारादि चतुर्विध आवेगों में प्रवृत्त होने की प्रक्रिया के भिन्न होने से पशु तथा मानव एक दूसरे से अलग पड़ते हैं।

एक और भी कारण है, जो मानव को पशु से अलग करता है। मानव के द्वारा की जाने वाली आहारादि क्रियाओं पर भावना का भी प्रभाव पड़ता है। इसी कारण मानव समाज को भावना प्रधान समाज माना गया है। मानवीय प्रत्येक व्यवहार में इस भावना की उपस्थिति होती है। आहारादि क्रियाओं में प्रवृत्त होने वाले किसी मानव को यदि किसी भावना के दर्शन न होते हों, तो वह क्रिया मानव की न हो कर महज एक पशु की क्रिया बन जाती है। फिर पशु और मानव में कोई भेद नहीं रहता है।

इस प्रकार मानव में रहने वाले 1. विवेक तथा 2. भावना, मानव को अन्य प्राणियों से अलग करते हैं। बहुत प्राचीन काल से मानव समाज ने इन्हें अपने अनुभव में लिया है। इतना ही नहीं, इनके विविध रूप भी अनुभूत किये हैं।

विवेक तथा भावना के इन विविध अनुभूत रूपों का समय-समय पर विद्वानों ने प्रथम तो नामकरण किया है, उनका स्वरुप निर्धारित किया है और शनै: शनै: उन्हें मानव समाज के प्रत्येक सदस्य के जीवन में व्यापक रूप से फैला देने का प्रयत्न भी किया है। इसी प्रयत्न को हम भारतीय समाज में नीति या नैतिकता के नाम से जानते हैं।

भारतीय समाज प्राचीन काल से ही इस नीति या नैतिकता की भावना को मानव मात्र में प्रस्थापित करता रहा है। उस समय के समाज के नेतृत्व करने वाले प्रत्येक महानुभाव ने, धर्म तथा दर्शन के क्षेत्र में मतभिन्नता के होते हुए भी, इस मानवीय नीति या नैतिकता को समान रूप से स्वीकार किया था। इतना ही नहीं, नीति या नैतिकता की भावना के कारण ही मानव समाज के प्रत्येक सदस्य को समान रूप से विकसित होने का तथा सुख, शान्ति, आनन्द आदि के अनुभव करने का अवसर प्राप्त हो सकता है। इस परम रहस्य को पा लिया था, तथा उसको स्वीकार भी कर लिया था।

औद्योगिकीकरण के आज के इस युग में हमने मानव के विकास के लिए तथा मानव को सुख, शान्ति एवं आनन्द की अनुभूति हो, इसके लिए प्राय: सभी साधन विपुल प्रमाण में उपलब्ध करवा दिये हैं। पुनरपि आज के मानव समाज को देखते हुए यह कहना गलत न होगा कि विकास के तथा सुख, शान्ति एवं आनन्द की प्राप्ति के सभी साधनों के पुष्कल प्रमाण में उपलब्ध होने पर भी मानव समाज के प्रत्येक सदस्य को समान रूप से विकास करने के तथा सुख, शान्ति एवं आनन्द को प्राप्त करने के अवसर समाप्त हो रहे हैं।

वस्तुत: साधनों की उपलब्धता की ओर दृष्टि रख कर किये इस विकास में हमने नीति या नैतिकता की भावना को अपनी दृष्टि से दूर कर दिया है। यही कारण है कि आज हमें मानव समाज के विशिष्ट गुणरूप नैतिकता की भावना के विषय में कुछ सोचना पड़ रहा है।

इसी पृष्ठभूमि पर हम यहां प्रस्तुत आलेख में मानवीय समाज की नैतिकता की भावना के विषय में कुछ विचार कर रहे हैं।

यह तो मानना पड़ेगा कि मानवीय नैतिकता की भावना बहुत ही सूक्ष्म और बहुत ही व्यापक है। इसलिये इसे किसी एक छोटे से निबन्ध में आकारित कर एकत्र करना संभव नहीं है संभवत: इसी कारण मानवीय नीति के स्वरूप का इदमित्थंतया निर्धारण करना और निर्धारण करके किसी देश या किसी समाज में इसे कानून का रूप दे देना, आज तक कहीं पर संभव नहीं हो पाया है। इस सत्य को हमारे प्राचीन आप्तजन जानते थे। इसी कारण उन्होंने मानव समाज की उन सभी नीतियों का मूल तत्त्व खोज लिया तथा उसे समग्र मानव जीवन में व्यापक रूप से लागू करने के उपाय भी क्रियान्वित किये थे। दुर्भाग्य है कि आज हमारा उस ओर कोई ध्यान नहीं है। प्रस्तुत आलेख में हम मानव समाज में अपेक्षित उन सभी नीतियों के मूलभूत तत्व का विमर्श कर रहे हैं, जिसे प्राचीन भारतीय समाज के सभी वर्ग ने सहर्ष स्वीकार किया था और उसी के कारण वह प्राचीन भारतीय समाज मानवीय विकास की समृद्धि की ऊँची बुलन्दियों को छूता था।

भारतीय समाज की नीतियों का प्राचीनतम उपदेश जिसमें संगृहीत माना जाता है, उस ऋग्वेद का एक मन्त्र है-

अक्षण्वन्त: कर्णवन्त: सखायो मनोजवेषु असमा बभूवु:
आदध्नास उपकक्षास उ त्वे ह्रदा इव स्नात्वा उ त्वे ददृशे।।

इस मन्त्र में जो कहा गया है, उसे इस मन्त्र के भाष्यकारों ने बहुत ही स्पष्ट से अभिव्यक्त किया है। वेद के भाष्यकारों में सुप्रसिद्ध आचार्य सायण ने इस मन्त्र का भाष्य करते हुए लिखा है-

''अक्षण्वन्त: अक्षिमन्त:। ... अनेन दृश्यते सर्वमित्यक्षि। यद्वा-तैजसत्वात् अन्येभ्यो ऽङ्गेभ्यो व्यक्ततरम्। तादृशाक्षियुक्ता:। कर्णवन्त: ... कर्णविलक्षणा-काशवन्त:, तादृशा: सखाय:। समानं ख्यानं ज्ञानं येषामिति सखाय:। तेषु वाक्येषु बाह्येष्विन्द्रियेषु समान-ज्ञाना: इत्यर्थ:। ते मनोजवेषु मनसा गम्यते ज्ञायन्ते इति मनोजवा: प्रज्ञाद्या:। तेषु असमा अतुल्या: बभूवु: भवन्ति। तेषु मध्ये केचन आदध्नास: आस्यदध्ना: आस्यप्रमाणोदका: ह्रदा इव मध्यमप्रज्ञानाह। अथ त्वे एके उपकक्षास: कक्षसमी पप्रमाणोदका ह्रदा इव। अल्पोदका इत्यर्थ:। अनेनाल्पप्रज्ञानाह। तथा त्वे एके स्नात्वा... स्नानार्हा: अक्षोभ्यो का: ह्रदा इव ददृश्रे दृश्यन्ते। अनेन महाप्रज्ञानाह।

उपर्युक्त भाष्य में आचार्य सायण ने मानव समूह को आँख-कान आदि बाह्य इन्द्रियों की दृष्टि से एक समान बताया है। परन्तु यही एक समान प्रतीत होने वाला मानव समूह अपने-अपने मनोगम्य अर्थात् बुद्धिगम्य ज्ञान की दृष्टि से त्रिविध बताया है। इन में कुछ लोग अल्पप्रज्ञ होते हैं, कुछ लोग मध्यमप्रज्ञ होते हैं तथा कुछ लोग महाप्रज्ञ होते हैं। इस प्रकार इन्द्रियों की समानता के कारण समान दिखाई देने वाला मानव समाज मनोजव के कारण विविधता पा लेता है। वस्तुत: यह विविधता मानव समाज के द्वारा स्वीकृत विविध प्रकार की नीतियों के कारण आती है। इन्हीं नीतियों को इस वेदमन्त्र में मनोजव के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

इस मन्त्रार्थ पर सूक्ष्म दृष्टि से विचार करने पर ज्ञात होता है कि इस मन्त्र में प्रथम तो इस कारण का वर्णन किया गया है कि जिस कारण के चलते समग्र मानव समाज समान होता है और समान ही दिखाई देता है। इस प्रकार सर्वप्रथम मानवीय समाज की समानता बता कर, बाद में इस समान दिखाई देने वाले मानव समाज में जिस कारण से असमानता आ जाती है, उस कारण का भी यहां वर्णन किया है।

वेद का मानना है कि आँख-कान आदि बाह्य इन्द्रियों की दृष्टि से देखने पर सभी मानव एक समान दिखाई देते हैं। पर इन इन्द्रियों के परे जो एक मन नामक तत्व है, उस (मन) की गति प्रत्येक मानव में भिन्न-भिन्न होती है। मन की गति की भिन्नता के कारण ही मानव समाज में असमानता खड़ी हो जाती है। इस असमानता के तीन स्तर वेद के इस मन्त्र में बताये गये हैं। एक स्तर उन मानवों का है, जो आदध्नास: अर्थात् मध्यप्रज्ञ होते हैं। दूसरा एक स्तर उन मानवों का होता है जो उपकक्षास: अर्थात् अल्पप्रज्ञ होते हैं। एक और स्तर होता है जिसे आचार्य सायण ने स्नानार्हा: अक्षोभ्योदका: ह्रदा इव इन शब्दों से स्पष्ट किया है, और अन्त में इन का भाव बताते हुए इन्हें महाप्रज्ञ कहा है। इस प्रकार समग्र मानव समाज में ये त्रिविध मानव समूह अलग-अलग दिखाई पड़ते हैं।

तात्पर्य यह है कि मानव समाज के प्रत्येक सदस्य को आँख, कान, मुख आदि बाह्य इन्द्रियां एक समान प्राप्त हुई हैं। साथ ही इन इन्द्रियों से परे एक मन नामक तत्त्व भी प्रत्येक को प्राप्त हुआ है। इस मन की गति को प्रत्येक मानव स्वयं अर्जित करता है तथा स्वयं ही इसकी गति की दिशा भी निर्धारित करता है। मानव के द्वारा विविध उपायों से प्राप्त की गई मन की इसी गति के कारण बाह्य रूप से एक समान दिखाई देने वाला मानव एक दूसरे से अलग बन जाता है। अर्थात् मानव समाज में मानव-मानव के बीच जो विभाग बनते हैं, उनका कारण प्रत्येक मानव के द्वारा व्यक्तिगत रूप से प्राप्त की जाने वाली अपने मन की गति है। (क्रमश:)

वैदिक–धर्म की सार्थकता

ले०.-महात्मा चैतन्य स्वामी, महादेव-सुन्दरनगर

यदि हम गहराई से चिन्तन करें तो आज परिवार, समाज, राष्ट्र तथा समूचे विश्व में जो वैर-वैमनस्य तथा अशान्ति और आतंकवाद का वातावरण बना है उसके मूल में व्यक्तियों द्वारा बनाए गए नए-नए मत-मज़हब एवं सम्प्रदाय ही हैं। इन विभिन्न सम्प्रदायों के कारण ही आज समूची मानवता खण्ड-खण्ड होकर रह गई है। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने इस बात को न केवल गहराई से समझा बल्कि इसका सार्थक निराकरण करने के लिए मानव मात्र को परमात्मा द्वारा प्रदत् वैदिक धर्म की ओर लौटने का आह्वान किया। उन्होंने जिस वैदिक धर्म को पुन: हमारे समक्ष रखा उसी के कार्यान्वयन करने से सम्प्रदाय-वाद, क्षेत्रवाद और मत-मज़हब वाद से ऊपर उठकर मानवतावाद एवं वसुधैव कुटुम्बकम का आदर्श स्थापित हो सकता है। उनके अनुसार किसी चिन्ह् विशेष पहनावे आदि को धारण करने मात्र या किसी तथाकथित गुरू, पीर या पैगम्बर की शरण में जाने मात्र से हम धार्मिक नहीं बन सकते हैं बल्कि वे ऐसे महामानव थे जिन्होंने धर्म को व्यक्ति की व्यवहारिकता के साथ जोड़ने का मार्ग प्रशस्त किया। उनकी स्पष्ट मान्यता थी कि कोई व्यक्ति यदि बाहरी चिन्ह आदि तो धारण कर ले मगर व्यवहार में वह दुराचारी हो, राष्ट्र द्रोही हो, मानवीय गुणों से रहित तथा मानवता का हत्यारा हो तो उसे धार्मिक नहीं का जा सकता है। उन्होंने धर्म को व्यक्ति के चरित्र के साथ जोड़ा और कहा कि जिससे व्यक्ति द्वारा इस लोक की भी उन्नति हो और वह परलोक को भी सुधार सके वही धर्म है। इसी दृष्टिकोण से उन्होंने मनु द्वारा बताए गए धर्म के दस नियमों का आचरण करके व्यक्ति को धार्मिक बनने की प्रेरणा दी। जो व्यक्ति धैर्यशील है, क्षमाशील है, जिसे मानसिक स्थिरता प्राप्त है, चोरी आदि दुर्गुणों से रहित है, संयमी है, बाहर-भीतर से पवित्र है, कुशाग्र बुद्धि है, विद्यावान है, क्रोधी नहीं है तथा सदा सत्य के पक्ष में ही रहने वाला है उसे ही उन्होंने भी धार्मिक माना है। इस प्रकार उनके द्वारा निर्देशित धर्म में दिखावा नहीं बल्कि आर्य अर्थात् श्रेष्ठ बनने की प्रक्रिया है। वे हमें वेद के उस युग तक लौटाना चाहते थे। जहां मत-मज़हब, जात-पात और क्षेत्रवाद से ऊपर उठकर व्यक्ति मानवता के उच्चादर्श का स्पर्श करके अपनी चतुर्दिक उन्नति के साथ-साथ प्रत्येक की उन्नति में, अपनी उन्नति समझकर एक आदर्श प्रस्तुत कर सके। उनके अनुसार वैदिक धर्म सार्वभौमिक है इसलिए पूरे विश्व में इसका कार्यान्वयन समुचित रूप से होना अपेक्षित है। इसी से जीओ और जीने दो तथा वसुधैव कुटुम्बकम् के उद्घोष सार्थकता प्राप्त कर सकते हैं।

इस सार्वभौमिक धर्म को जब लोगों ने अपने-अपने स्वार्थों की सिद्धि के लिए मत-मज़हब एवं सम्प्रदायवाद रूपी संकरी गलियों में भटका दिया तो इसी धर्म ने पाखण्ड और आडम्बर का रूप धारण कर लिया तथा व्यक्ति पुरूषार्थ को छोड़कर भाग्यवादी बन गया। वैदिक धर्म मानव मात्र को पुरूषार्थ की प्रेरणा देता है, भाग्य के भरोसे बैठे रहने का परामर्श नहीं। महर्षि जी ने कर्म की और निरन्तर कर्म करने की ही प्रेरणा दी है क्योंकि यही एक मात्र पूंजी हमारे पास है। परमात्मा वास्तव में ही उसकी सहायता करता है जो अपनी सहायता आप करता है। इसलिए उन्होंने सब प्रकार के पाखण्डों और आडम्बरों से ऊपर उठ कर हमें परिश्रम करने के लिए ही प्रेरित किया है। उनका कथन है कि जीव कर्म करने में स्वतन्त्र है मगर फल भोगने में परतन्त्र है। ठीक यही बात गीता में भी अलग ढंग से कही गई है कि हमारा अधिकार कर्म करने तक ही सीमित है फल-प्राप्ति में हमारा कोई हस्तक्षेप नहीं हो सकता है क्योंकि फल तो हमारे कर्मों के अनुसार परमात्मा स्वयं देंगे ही। उन्होंने लोगों के मन से इस भ्रम को भी निकाला है कि हमें बुरे कर्मों की माफी मिल सकती है। उन्होंने इसका सटीक तर्क दिया कि क्योंकि परमात्मा न्यायकारी है इसलिए वह कभी भी किसी के साथ किसी प्रकार की रियायत नहीं कर सकता है बल्कि वह उसी प्रकार का फल देगा जैसा हमने कर्म किया होगा। बड़े आश्चर्य की बात है कि व्यक्ति बुरे कर्म तो करता है मगर उसके फल से बचना चाहता है। वास्तव में इस बचाव की भावना ने ही अनेक प्रकार के मत-मज़हबों आदि को जन्म दिया है। बुरे कर्म के फल को ही पाप कहा गया है मगर व्यक्ति बुरे काम को छोड़ना नहीं चाहता है और उसके फल से बचने के लिए वह कभी किसी नदी विशेष में नहाकर, कभी किसी विशेष पैगम्बर या गुरू के पास जाकर बचना चाहता है। इस प्रकार के धर्मभीरू लोगों को गुमराह करने के लिए ही नित नए-नए मत-मज़हब एवं सम्प्रदाय आदि बढ़ते चले जा रहे हैं और दुनिया प्रतिदिन अधिक से और अधिक दुराचारी बनती जा रही है। इसलिए जिस धर्म को व्यक्ति के सुख का मूलाधार कहा गया है वह मत-मज़हब एवं सम्प्रदाय आदि के रूप में विकृत होकर आज दु:ख, कष्ट, क्लेश, वैर-वैमनस्य तथा आतंकवाद का रूप ले चुका है। धर्म तो आज भी परिवार, समाज, राष्ट्र तथा समूचे विश्व के लिए सुख का आधार ही है मगर उसे मत-मज़हब, सम्प्रदाय, पाखण्ड और आडम्बर की घटनाओं से बाहर निकालना होगा। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के हम बहुत आभारी हैं कि उन्होंने इन संकुचित तथा विनाशकारी घटनाओं को जड़-मूल से ध्वस्त करने का मार्ग प्रशस्त किया है।

आर्य समाज बरनाला में श्री कृष्ण जन्माष्टमी पर्व सम्पन्न

दिनांक 03.09.2018 दिन-सोमवार को आर्य समाज बरनाला में योगिराज श्री कृष्ण जी का जन्मोत्सव वैदिक पद्धति से हर्षोल्लास एवं श्रद्धापूर्वक मनाया गया। पुरोहित श्री राम शास्त्री ने हवन यज्ञ सम्पन्न करवाया। जिसमें श्री विजय आर्य सपत्नी का मुख्य यज्ञमान के रूप में आहुतियाँ प्रदान की। तत्पश्चात् पुरोहित श्री राम शास्त्री ने श्री कृष्ण के जीवन-चरित्र पर प्रकाश डालते हुए प्रेरणा दी कि उस महान योगी के मर्यादित जीवन से शिक्षा-ग्रहण करें। श्री राम चन्द्र आर्य, श्री अजीत सिंह (पंछी), एवं प्रिंसीपल-श्रीमती रंजना मैनन ने अवसर अनुकूल अपने सुमधुर भजनों के द्वारा वैदिक संदेश दिया। बरनाला की सभी आर्य-शिक्षण-संस्थाओं के विद्यार्थियों द्वारा इस सुअवसर पर संगीतमय वैदिक भजन प्रस्तुत किए गए। इस अवसर पर वेद प्रचार मंत्री-श्री राम कुमार सोबती, एल. बी. एस. कॉलेज की प्राचार्या-डॉ. नीलम शर्मा एवं आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के मंत्री श्री भारत-भूषण मैनन ने अपने वक्तव्य में उस महान् योगी श्री कृष्ण के जीवन से प्रेरणा लेकर मर्यादित एवं आप्त ऋषियों द्वारा प्रमाणित जीवन-चरित्र को अपने जीवन में उतारने के लिए प्रेरित किया। इस अवसर पर आर्य शिक्षण संस्थाओं के प्रबन्ध समिति के सदस्यगण, समूह-प्रिंसीपल एवं स्टाफगण तथा वरिष्ठ विद्यार्थीगण उपस्थित थे तथा बरनाला के गणमान्य सदस्यों में श्रीमती रक्षा शर्मा रिटायर्ड डिप्टी डायरैक्टर, श्री केवल जिन्दल, श्री सूरज भान गर्ग, श्री शिव कुमार बत्ता, श्री प्रदीप गोयल जी उपस्थित थे। अन्त में मानयोग प्रधान डॉ. सूर्यकान्त शोरी जी ने आगन्तुक श्रोताओं का धन्यवाद करते हुए योगिराज श्री कृष्ण को एक सच्चा कर्म योगी, ज्ञान-योगी बताया और सभी श्रोताओं को आप्त-ग्रन्थों को पढ़ने की प्रेरणा दी। सभी ने अन्त में श्रद्धापूर्वक शान्ति पाठ किया। श्री विजय आर्य के सौजन्य से प्रसाद वितरण किया गया। इस प्रकार कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। **-तिलक राम मन्त्री आर्य समाज बरनाला**

श्री कृष्ण जन्माष्टमी

आर्य समाज मन्दिर कमालपुर होशियापुर में दिनांक 02-09-2018 (रविवार) को श्री कृष्ण जन्माष्टमी का पर्व बड़ी धूम धाम के साथ मनाया गया। इस अवसर पर एक विशेष हवन यज्ञ का आयोजन किया गया जिसमें श्रीमती डॉ. सविता ऐरी अपने सुपुत्र मृदुल के साथ यजमान बनी। तत्पश्चात् दयानंद हाल में कार्यवाही चली। श्रीमती दुर्गेश नन्दिनी ने प्रभु भक्ति का मार्मिक भजन सुनाया।

डा. पी. एन. चोपड़ा ने अपने मुख्य उदबोधन में श्री कृष्ण को युग पुरूष बताया और कहा कि उन्होंने अपनी प्रतिभा और अपार साहस के बल पर बुराई पर विजय प्राप्त की और कंस एवं जरासंध जैसे दुष्ट राजा को उखाड़ फैंका। श्री कृष्ण ने कर्म करने पर बल दिया और कर्मफल को ईश्वर पर छोड़ देने को कहा। प्रो. के. सी. शर्मा ने उपस्थित आर्य जनों को धन्यवाद देते कहा कि योगेश्वर श्री कृष्ण ने योग का अर्थ मानव का ईश्वर से जुड़ने का उपदेश दिया। **-यशपाल वालिया**

आर्य समाज के महापुरुषों से सम्बन्धित प्रश्नोत्तरी

श्री सुरेन्द्र मोहन तेजपाल अधिष्ठाता साहित्य विभाग द्वारा प्रसिद्ध विद्वानों के सहयोग से तैयार प्रश्नोत्तरी। आशा है आर्य मर्यादा के पाठक इससे लाभान्वित होंगे।

प्र.1-महर्षि दयानन्द ने आर्य समाज की स्थापना क्यों की?
उत्तर-समाज सुधार हेतु।

प्र.2-समाज सुधार की दिशा में महर्षि दयानन्द का मूल उद्देश्य क्या था?
उत्तर-शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।

प्र.3-महर्षि दयानन्द ने इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए क्या किया?
उत्तर-प्रत्येक क्षेत्र में मार्गदर्शन किया।

प्र.4-महर्षि दयानन्द का मूल ध्येय क्या था?
उत्तर-संसार में विद्या का प्रकाश लाना।

प्र.5-आर्य समाज ने शिक्षा के क्षेत्र में क्या योगदान दिया?
उत्तर-गुरूकुल, डी.ए.वी. जैसे शिक्षण संस्थान खोले।

प्र.6-गुरूकुल शिक्षा प्रणाली किसने प्रारम्भ की?
उत्तर-महात्मा मुंशीराम।

प्र.7-डी.ए.वी. की स्थापना कब हुई?
उत्तर- 1886 में।

प्र.8-डी.ए.वी. की स्थापना का उद्देश्य क्या था?
उत्तर-अंग्रेजी आदि विषयों के साथ संस्कृत व वेदादि शास्त्रों की शिक्षा देना।

प्र.9-डी.ए.वी. के अवैतनिक मुख्य अध्यापक कौन रहे?
उत्तर-महात्मा हंसराज।

प्र.10-डी.ए.वी. के उत्थान के लिए किन महापुरूषों का योगदान महत्वपूर्ण था?
उत्तर-महात्मा हंसराज, गुरूदत्त विद्यार्थी, लाला लाजपतराय।

प्र.11-गुरूदत्त विद्यार्थी ने डी.ए.वी. के लिए क्या जिम्मेदारी उठाई?
उत्तर-धन संग्रह, गणित व विज्ञान अवैतनिक पढ़ाने का।

प्र.12-गुरूदत्त विद्यार्थी का जन्म कब और कहां हुआ?
उत्तर-26 अप्रैल 1864 को मुल्तान में।

प्र.13-गुरूदत्त विद्यार्थी का निधन कब हुआ?
उत्तर-19 मार्च 1890 में।

प्र.14- महात्मा हंसराज का जन्म कब हुआ था?
उत्तर- 19 अप्रैल 1864 में।

प्र.15-महात्मा हंसराज का जन्म कहां हुआ था?
उत्तर- पंजाब प्रान्त में होशियारपुर जिले के बजवाड़ा नामक ग्राम में।

प्र.16-महात्मा हंसराज के डी.ए.वी. के लिए अवैतनिक कार्य करने पर उनके परिवार को गुजारे हेतु 40 रूपये मासिक कौन देता था?
उत्तर-महात्मा हंसराज के बड़े भाई श्री मुलखराज जी।

प्र.17-लाला लाजपतराय जी का जन्म कब हुआ था?
उत्तर-28 नवम्बर 1864 में।

प्र.18-लाला लाजपतराय का जन्म कहां पर हुआ था?
उत्तर- पंजाब प्रान्त में जिला फरीदकोट के गाँव ढुँढ़ीके में।

प्र.19-लाला लाजपतराय जी के पिता का क्या नाम था?
उत्तर-लाला राधा कृष्ण जी।

प्र.20-लाला जी का निधन कब हुआ?
उत्तर-17 नवम्बर 1927 को।

प्र.21-महात्मा हंसराज का देहान्त कब हुआ?
उत्तर- 24 नवम्बर 1937 को।

प्र.22-स्वामी श्रद्धानन्द का जन्म कब हुआ?
उत्तर- सन् 1854 में।

प्र.23- स्वामी श्रद्धानन्द का सन्यास से पूर्व क्या नाम था?
उत्तर- मुंशीराम।

प्र.24-मुंशीराम जी के पिता का क्या नाम था?
उत्तर- लाला नानक चन्द जी।

प्र.25-मुंशीराम से महर्षि दयानन्द का प्रथम मिलन कब कहां हुआ?
उत्तर-सन् 1879 को बरेली में।

प्र.26-मुंशीराम को गुरूकुल खोलने की प्रेरणा कहां से मिली?
उत्तर- सत्यार्थ प्रकाश के स्वाध्याय से।

प्र.27- आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब में गुरूकुल खोलने का प्रस्ताव कब पास हुआ?
उत्तर- 26 नवम्बर 1898 को।

प्र.28-सर्वप्रथम किस चीज की आवश्यकता महसूस की गई?
उत्तर- धन की (लगभग 30 हजार रूपये की)

प्र.29-मुंशीराम ने धन उपार्जन हेतु क्या प्रण लिया?
उत्तर-जब तक 30 हजार रूपये इकट्ठा नहीं होते तब तक घर नहीं आऊंगा।

प्र.30-मुंशीराम ने कितने रूपये इकट्ठे कर लिए?
उत्तर- 40 हजार रूपये।

समराला में भजन सन्ध्या समारोह

आर्य समाज समराला (लुधियाना) में दिनांक 9 सितंबर 2018 दिन रविवार को श्री कृष्ण जन्माष्टमी के उपलक्ष्य में सायं काल 4:30 बजे से 7:00 बजे तक भजन सन्ध्या का आयोजन किया गया।

जिसमें आर्य समाज समराला के सुयोग्य पुरोहित श्री राजेन्द्र व्रत शास्त्री (वैदिक भजनोपदेशक) जी ने योगीराज श्री कृष्ण जी के जीवन पर प्रकाश डाला और मधुर भजन रखे और कहा कि श्री कृष्ण एक योगी पुरूष और धर्म रक्षक व आदर्श राजा थे। लेकिन पुराण वक्ताओं ने श्री कृष्ण जी को चरित्रहीन साबित किया है। कृष्ण ने द्रोपदी की लाज बचाई-अर्जुन को उपदेश दिया। महाभारत में श्री कृष्ण लीला कहीं भी चरित्रहीन नहीं है। शास्त्री जी ने कहा कि हमारे महापुरुषों का उपहास किया जा रहा है-शास्त्री जी ने महर्षि दयानन्द जी के मधुर भजन सुनाऐं।

इस शुभ अवसर पर-प्रधान जी सोम प्रकाश, रमन गर्ग, श्रीराम, जयदीप, गगन, कँचन व्रत, श्रुति, अनुव्रत, सीमा, मीना, रूचि, आदि आर्यजन उपस्थित थे।

कार्यक्रम के पश्चात् ऋषि प्रसाद वितरण किया गया।

अब्रेश कुमार आर्य मन्त्री आर्य समाज समराला

आर्य समाज सैक्टर 22 चण्डीगढ़ का चुनाव

आर्य समाज सैक्टर 22-ए, चण्डीगढ़ का वार्षिक चुनाव दिनाँक 19.8. 2018 रविवार को सत्संग के बाद सम्पन्न हुआ। जिसमें निम्न प्रकार से पदाधिकारियों का गठन किया गया।

संरक्षक-श्री अवनीश चौहान, श्री अशोक पाल जग्गा, प्रधान-श्री बनी सिंह, उपप्रधान-श्री सोमदत्त शास्त्री, उपप्रधान-श्री सुरेन्द्र सिंह, मंत्री-श्री प्रेमचन्द गुप्ता, उपमंत्री-श्री शिवनारायण कौशिक, उपमंत्री-श्री नीरज कौड़ा, कोषाध्यक्ष-श्री अनिल वालिया, पुस्तकालय अध्यक्ष-श्री महेश कुमार आर्य, वेदप्रचार अधिष्ठाता-श्री ईषम चन्द, अधिष्ठाता आर्य वीरदल-श्री लक्ष्मण प्रसाद शास्त्री, अध्यक्ष पुस्तक बिक्री विभाग-श्री यशपाल आर्य, अध्यक्ष लेखा निरीक्षक-श्री ईश्वर कुमार, अन्तरंग सदस्य-श्री धन सिंह, श्री प्रेमलाल भट्ट, श्री सुदेश कुमार, श्री सतपाल हरीश, श्री कमल कृष्ण महाजन, श्री सतपाल सिंह। **बनी सिहं प्रधान**

दयानन्द मठ चम्बा के अठतीसवें वार्षिकोत्सव तथा अठारहवें दुर्लभ शारद यज्ञ का सादर आमन्त्रण

वि ये दधुः शारदं मासमादहर्यज्ञमक्तुं चादृचम्।
अनाप्यं वरुणो मित्रो अर्यमा क्षत्रं राजान आशत।।

अर्थ-(ये) जो विद्वान् (शारदं मासं) शरद् मास के (आद्) आरंभ में (अहः अक्तुं च) दिन रात में निरन्तर चलने वाले (यज्ञं) यज्ञ को (ऋचं) ऋग्वेद की ऋचाओं से (विदधुः) भले प्रकार से यानि अच्छी प्रकार से करते हैं। (अनाप्यं) दुर्लभ (लम्बे समय तक दिन रात लगातार किए जाने के कारण जिसे कोई नहीं करता है अतः जो सुलभ नहीं दुर्लभ है) इस प्रकार के यज्ञ को जो विद्वान, जो साधक, जो मनीषीजन साहस करके निष्ठा व श्रद्धा से कर लेते हैं। वे (वरूणः) सबके वरण करने योग्य अथवा पूजनीय हो जाते हैं। (मित्रः) सबके प्यारे बन जाते हैं। (अर्यमा) वे न्यायशील तथा (राजानः) दीप्तिमान होकर यानि महान तेजस्वी बनकर (क्षत्रं) क्षात्र धर्म को (आशत) प्राप्त करते है। यानि देश, जाति, धर्म की तथा प्राणीमात्र की रक्षा करते हैं। न्याय का आश्रय लेकर प्राणीमात्र की रक्षा करते हैं। भावार्थ-क्षतात् त्रायति यः सः क्षत्रियः-क्षति से, यानि विनाश से जो समाज को, राष्ट्र को, व जाति को तथा समस्त प्राणियों को बचाए उसे क्षत्रिय कहते हैं। और इन सब को क्षति से तेजस्वी, बलवान, न्यायप्रिय मनुष्य ही बचा सकता है। रक्षा करने वाले की सभी लोग मान, सम्मान व कामना करते हैं और वह न्यायप्रिय, तेजस्विता इस यज्ञ से प्राप्त होती है जिससे क्षात्र धर्म का पालन करता हुआ मनुष्य सबके मान, सम्मान व प्रीति का पात्र बनता है।

प्रिय बन्धुओं ऋग्वेद में वर्णित इस दुर्लभ शारद यज्ञ की सूचना जिसे पूज्य चरण अपने जीवन काल में निष्ठा से करते आए जीवन के अन्तिम श्वास तक भी जिसे करने की तमन्ना लिए हुए थे, जिसे हम अपना धर्म अपना कर्तव्य मानकर आगे भी चलाए रखने का प्रयास कर रहे हैं। चूंकि आप हमारे हो, हम आपके हैं। पूज्य चरणों में आप लोगों की भी आस्था रही है और हमारी भी आस्था है। वे आप सभी का भी कल्याण चाहते थे, और हमारा भी कल्याण चाहते थे। वेद में सर्वेषां सर्वविध कल्याणार्थ यद् कर्म विहितमस्ति वेद में सभी के सभी प्रकार के कल्याण के लिए जो कर्म बतलाया गया है, जिसे सब प्रकार की समस्याओं का एक मात्र समाधान बताया गया है, जिस कर्म से सभी श्रेष्ठ कर्म सम्पन्न हो जाते हैं। इसीलिए जो श्रेष्ठकर्म नहीं, श्रेष्ठ ही नहीं, श्रेष्ठतम कर्म है। जिसके लिए वेद भगवान कहते हैं, यज्ञो वैः श्रेष्ठतमं कर्म यज्ञ श्रेष्ठतम कर्म है। जिसे करने की विधा, जिसे करने का तरीका शारद यज्ञ के रूप में पूज्य स्वामी जी हमारे सामने प्रस्तुत कर गए हैं। जिस यज्ञ के महत्व को मंत्र स्वयं कह रहा है, अथवा मंत्र द्वारा वेद भगवान स्वयं कह रहे हैं उसका समय आ गया है। इसकी सूचना मैं आप लोगों को निरन्तर देता आ रहा हूँ और अब यह इस विषय की अन्तिम सूचना है। अतः आमन्त्रण के रूप में इसे भेज रहा हूँ।

चूंकि-पूज्य स्वामी जी हम सबका हित चाहते थे। इसीलिए दान, परोपकार आदि श्रेष्ठ कर्मों के साथ-साथ इस श्रेष्ठतम कर्म को करने की प्रेरणा भी अपने उद्बोधनों में हमें दिया करते थे। इसलिए आओ हम सब मिलकर इस श्रेष्ठतम दुर्लभ शारद यज्ञ कर्म को सम्पन्न करें। आप लोगों के सहयोग के बिना मैं अकेला कुछ नहीं कर सकता। आप लोगों के सहारे के बिना मैं एक कदम भी नहीं चल सकता। यह एक महान कष्ट साध्य, व्यय साध्य, श्रम साध्य कर्म है। इसे अकेले नहीं किया जा सकता है। लेकिन इसे भी करना जरूरी है क्योंकि यही वह साधन है जिससे बैतरणी पार की जा सकती है। हम सब ने बैतरणी को पार करना ही है तो फिर कैसे इसे पार करें। वेद भगवान तरीका बताते हैं-अश्मन्वती रीयते संरभध्वं- हे मनुष्यो संसार में जो कार्य तुम्हें कठिन लगता है, लेकिन उसे करना है, तो फिर उसे कैसे करना है। सबसे पहले तो उत्साह को अपने अन्दर जगाओ और मिलकर संगठित होकर उसे पूरा करने में लग जाओ। बस वह कार्य आसानी से पूरा हो जाएगा। उससे सभी का कल्याण हो जाएगा। इसलिए बन्धुजनों आओ उत्साहपूर्वक इकट्ठे होकर पूज्य स्वामी जी महाराज के इस प्रिय कार्य को पूरी श्रद्धा से पूर्ण करें। इस महान यज्ञ कर्म के द्वारा हम लोग जहां देवों व पितरों का श्रद्धा से तर्पण करेंगें वहीं अपना भी महान कल्याण करेगें। इसलिए हे प्रियजनों प्रभु कृपा से, दिव्यात्माओं के आशीर्वाद से, देवो को तृप्त करने के लिए, पितरों के तर्पण के लिए, प्राणीमात्र के कल्याण के लिए उपस्थित होकर इस अवसर का भरपूर लाभ उठाऐं। आप लोग इस भव्य यज्ञ के कार्यक्रम में आऐं और आकर देवों के लिए यज्ञ में आहुतियां समर्पित कर अपनी अभीष्ट कामनाओं को पूर्ण करें। ईश्वर सब पर अपनी कृपाएं वर्षाएं। कार्यक्रम 7 अक्टूबर 2018 से 9 अक्टूबर तक दयानन्द मठ चम्बा का तथा महर्षि दयानन्द आदर्श विद्यालय का वार्षिकोत्सव 7-10-2018 अक्टूबर प्रातः 6 बजे से 8 बजे तक यज्ञ 8 बजे से 9 तक भजन, 9 बजे 10 बजे तक प्रवचन, सायंकाल 4 बजे से 5.30 बजे तक यज्ञ, 5.30 बजे से 6.15 बजे तक भजन, 6.15 बजे से 7 बजे तक प्रवचन यह कार्यक्रम 9 अक्टूबर 2018 तक चलेगा।

विशेष-7 व 8 अक्टूबर को 11 से 3.30 तक आदर्श विद्यालय के बच्चों का कार्यक्रम होगा। जिसमें योगासनों की प्रदर्शनियां, योग, पिरामिंड, भाषण, लोकल कल्चर, लोकनृत्य, कुरीतियों पर आघात करने वाली नाटिकाओं आदि की झांकियां दिखाई जाएंगी। स्टाफ तथा प्रधानाचार्य/उपाचार्या द्वारा विद्यालय द्वारा किए जा रहे रचनात्मक कार्यों व उपलब्धियों का विवरण भी सबके सामने प्रस्तुत किया जाएंगा। 9 अक्टूबर सायंकाल के वार्षिकोत्सव के यज्ञ की पूर्णाहुति। 10-10-2018 को प्रातः 6.30 से 11-10-2018 दुर्लभ शारद यज्ञ जोकि अहः अक्तुं यज्ञं रात-दिन निरन्तर चलेगा 11 अक्टूबर को प्रातः 10 बजे इसकी पूर्णाहुति होगी।

आचार्य महावीर सिंह अध्यक्ष दयानन्द मठ चम्बा

आर्य समाज जीरा में जन्माष्टमी पर्व मनाया गया

आज दिनांक 03-09-2018 दिन सोमवार को आर्य समाज जीरा में बड़ी ही श्रद्धा व उमंग के साथ जन्माष्टमी पर्व मनाया गया, जिसमें सर्वप्रथम प्रातः नौ बजे पुरोहित किशोर कुणाल जी ने बृहद्यज्ञ करवाया। यज्ञोपरान्त श्री कृष्ण भगवान् का चरितों का गुणगान किया और बताया कि आज हमें सभी को श्री कृष्ण भगवान् के उदान्त विचारों को अपने जीवन में उतारना और धारणा चाहिए, यही इस पर्व के मनाने का तात्पर्य व उद्देश्य है। साथ ही इस पर्व के मनाने का ढेरों सारी बधाईयाँ पुरोहित जी ने आर्य सज्जनों को दीं। अन्त में इस समाज के प्रधान श्री सुभाष चन्द्र आर्य ने भी सभी को साधुवाद किया और अपना आशीर्वाद देते हुए कहा कि हमें इसी तरह सभी महापुरुषों की जन्मोत्सव पर्व को मनाते रहना चाहिए ताकि उनके गुण हमारे अंदर भी आए और हम उनके जैसे बनने का प्रयास करें।

अन्त में पुरोहित जी ने शांति पाठ के साथः सत्संग समापन किया और प्रसाद वितरण किया। **मंत्री-सुनील कुमार आर्य**

पृष्ठ 8 का शेष-संस्कृत वैज्ञानिक भाषा...

के दोष दूर हो जाएंगे, सब प्रकार के असत्य और असत्य और झूठ, सब प्रकार के कपट और छल, सब प्रकार के वैर-विद्वेष, कलह और लड़ाई झगड़े, सब प्रकार के लोभ लालच, लूट-खसोट, चोरी-डाके और सब प्रकार की कुत्सित कामनाएं और वासनाएं परे भाग जाएंगी और वे परम पवित्र बन जाएंगे। सब लोग भाई-भाई की भांति प्रेम से मिलकर रहा करेंगे। कोई किसी के अधिकारों का हनन नहीं करेगा। संसार से लड़ाईयों और युद्धों की विभीषिका मिट जाएंगी।

उन्होंने कहा कि सर्वत्र शान्ति और प्रेम का साम्राज्य छा जाएगा। धरती स्वर्ग बन जाएगी और उस पर रहने वाले लोग देवता बन जाएंगे। सब लोगों के घरों में सुख-समृद्धि और आनन्द की गंगा बहने लगेगी। आर्य समाज के पुरोहित श्री कृष्ण कान्त जी द्वारा सामवेद के मंत्रों द्वारा हवन यज्ञ सम्पन्न करवाया। इस कार्यक्रम में आर्य समाज के संरक्षक श्री आसकरण सरदाना, श्री ओ.पी. खन्ना, श्री जी.सी. तालुजा, सतपाल जौली व माता जी प्रतिदिन उपस्थित रहे। आर्य समाज के प्रधान श्री सतीश अरोडा एवं मंत्री श्री हरेन्द्र भारद्वाज जी ने मुख्य यजमान श्री राकेश नय्यर, श्री अरुण नय्यर, श्री राजी खन्ना, योगेन्द्र मिश्रा, श्री अमृता खन्ना, मानव खन्ना का स्वागत व धन्यवाद किया। पूर्ण आहुति के समय सभी नगर निवासियों एवं समाज के सदस्यों का सहयोग तन, मन एवं धन से प्राप्त होने से यह कार्य सफलता को प्राप्त हुआ। इसमें आर्य समाज के सदस्य श्री पंकज, श्री नितिन व अभिषेक खन्ना परिवार, डा. आसकरण सरदाना, डा. कक्कड़, के.के.खोसला, तरसेम लाल, अमन, प्रेम सागर, प्रेम प्रकाश, अमरनाथ, दीवान चंद, नवीन जी एवं पूर्व प्रधान सुरेन्द्र मदान व विक्रम महाजन जी उपस्थित रहे। स्त्री आर्य समाज से आंचल, नरेश सहगल, स्नेह पाठक, आशा अरोडा, रेणु, मीनाक्षी, दीप्ति, पूनम खन्ना परिवार से उपस्थित रहे।

हरेन्द्र भारद्वाज, मंत्री आर्य समाज

श्री प्रेम भारद्वाज 25वीं बार आर्य समाज नवांशहर के प्रधान चयनित

आर्य समाज नवांशहर के नवनियुक्त प्रधान श्री प्रेम भारद्वाज जी समूह सदस्यों के साथ संयुक्त चित्र खिंचवाते हुये तथा उपर बधाई देती हुई आर्य समाज नवांशहर की महिला सदस्य।

आर्य समाज नवांशहर का वार्षिक अधिवेशन सभा के प्रधान व आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर के महामंत्री श्री प्रेम भारद्वाज जी की अध्यक्षता में आयोजित किया गया। इसमें प्रेम भारद्वाज को लगातार 25वीं बार सर्वसम्मति से प्रधान पद के लिये चयनित किया गया। चुनाव अधिकारी श्री सुरेन्द्र मोहन तेजपाल की देख रेख में आयोजित हुये चुनावों में नवनियुक्त प्रधान श्री प्रेम भारद्वाज जी को समूचे हाउस ने अपनी टीम के गठन के अधिकार भी सौंपे। इससे पूर्व आर्य समाज के मंत्री जिया लाल शर्मा ने बीते वर्ष की गतिविधियों की जानकारी दी तथा पिछली बैठक की समूचे हाउस से पुष्टि करवाई। कोषाध्यक्ष श्री कुलवन्त शर्मा ने पूरे वर्ष का लेखा जोखा प्रस्तुत किया। नवनियुक्त प्रधान श्री प्रेम भारद्वाज ने समूचे हाउस का आभार व्यक्त करते हुये कहा कि हाउस ने लगातार जो विश्वास उन पर बनाये रखा है वह उसके लिये समूचे हाउस के आभारी हैं। इस अवसर पर श्री विनोद भारद्वाज, श्रीमती रक्षा भारद्वाज, मीना भारद्वाज, ललित मोहन पाठक नगर कौंसिल प्रधान, डा. सी.एम. भंडारी, डा. ए.के. राजपाल, मंत्री आर्य समाज जिया लाल, कुलवन्त शर्मा, वीरेन्द्र सरीन, पंकज तेजपाल, मनोज अरोडा, अक्षय तेजपाल, सुरेश गौतम, विकास तेजी, विपिन तनेजा, प्रो. एस.के. बरूटा, संगीता तेजपाल, नीरू नारद, अरविन्द नारद, भास्कर, नीरू त्रिपाठी, रितू तेजपाल, नीतू तनेजा उपस्थित थे।

आर्य समाज नंगलटाऊनशिप में वेद प्रचार सप्ताह सम्पन्न

आर्य समाज नंगलटाऊनशिप के वेद प्रचार सप्ताह के अवसर पर वैदिक प्रवक्ता श्री सुन्दर लाल शास्त्री जी के साथ आर्य समाज के सदस्य एवं चित्र दो में आर्य समाज की यज्ञशाला में हवन करते हुये आर्य समाज के पदाधिकारी एवं सदस्य।

आर्य समाज नंगल टाउनशिप का वेद प्रचार सप्ताह विगत दिनों भारी उत्साह के साथ सम्पन्न हुआ जिसमें चण्डीगढ़ से पधारे हुये वैदिक प्रवक्ता श्री सुन्दर लाल जी शास्त्री जी ने अलग अलग प्रसंगों जैसे वैदिक संस्कृति का प्राण यज्ञ, यज्ञ की वैज्ञानिकता, वेद उद्धारक महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के योगदान पर अपने विचार व्यक्त किये। श्री सुन्दर लाल जी शास्त्री वैदिक ग्रंथों के ज्ञाता हैं। श्री कृष्ण जन्माष्टमी पर योगेश्वर श्री कृष्ण जी एक आप्त पुरुष व्यक्तित्व एवं उनके कार्यों पर विलक्षण विवेचन तथा वर्तमान में उनकी प्रासंगिकता पर अपने विचार व्यक्त किये। उन्होंने कहा कि योगीराज श्रीकृष्णचन्द्र जी महाराज का सम्पूर्ण जीवन हमारे लिए प्रेरणास्रोत है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी सत्यार्थ प्रकाश में श्रीकृष्ण के शुद्ध स्वरूप को वर्णन करते हुए लिखते हैं कि– देखो! श्रीकृष्ण जी का इतिहास महाभारत में अत्युत्तम है। उनका गुण, कर्म, स्वभाव और चरित्र आप्त पुरूषों के सदृश है जिसमें कोई अधर्म का आचरण श्रीकृष्ण जी ने जन्म से मरण पर्यन्त बुरा काम कुछ भी किया हो ऐसा नहीं लिखा और इस भागवत वाले ने अनुचित्त मनमाने दोष लगाएं हैं। श्रावणी और श्रीकृष्णजन्माष्टमी का पर्व दोनों हमारे लिए प्रेरणादायक हैं। श्रावणी पर्व एक ओर जहां हमें स्वाध्याय करने के लिए प्रेरित करता है वहीं पर श्रीकृष्ण जन्माष्टमी का पर्व हमें महामानव श्रीकृष्ण के पद्चिह्नों पर चलने की प्रेरणा देता है। ऋषि दयानन्द मानते थे कि यदि धरती के लोग वेद को अपना लें और उसकी शिक्षाओं के अनुसार अपना जीवन बिताने लग जाएं तो उनके जीवन से सब प्रकार (शेष पृष्ठ सात पर)

श्री प्रेम भारद्वाज महामन्त्री, सम्पादक, प्रकाशक, मुद्रक द्वारा गायत्री प्रिंटिंग प्रैस, मण्डी रोड जालन्धर से मुद्रित होकर आर्य मर्यादा कार्यालय, गुरुदत्त भवन, चौक किशनपुरा, जालन्धर से इसकी स्वामिनी आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिए प्रकाशित हुआ। E-mail: apspunjab2010@gmail.com, www.aryapratinidhisabha.org
आर्य मर्यादा में प्रकाशित सारी लेखन सामग्री से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं। प्रत्येक विवाद के लिए न्याय क्षेत्र जालन्धर होगा।